UGC APPROVED

ISSN : 2394-3580 VOLUME - 5 No. : 5, March - 2018

Swadeshi Research Foundation

A MONTHLY JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

Research Journal SRF Book Publication

Referred & Review Journal

Indexing & Impact Factor - 3.9

Published by :

Swadeshi Research Foundation & Publication

Seva Path, 320 Sanjeevani Nagar,
Veer Sawarkar Ward, Garha, Jabalpur (M.P.) - 482003

Contents

S.No.	Paper Title	Author Name	Page No.
1	Educational views of Swami Vivekananda in the present context	Prof. G. Vidya Sagar Reddy Dr. G. Vasudevaiah	1-6
2	A study of status of sanitation and sewerage services to urban slum people and its impact on the living conditions after the BSUP program implementation with special reference to Indore city	Dr. (Mrs.) Shree Dwivedi Avinash Bhatheja	7-10
3	Ayurvedic herbalism development prospective views	Vd.Pravin Raghunathrao Joshi Vd.Anita Pravin Joshi (Kulkarni)	11-12
4	In Pursuit of Happiness: Women in Selected Breast Stories of Mahasweta Devi	Niharika Singh	13-16
5	Shades of Gender in Talat Abbasi's Short Stories	Gauri Handa	17-19
6	PIKETTY AND PROGRESS – A REVIEW	Dr. Madhu Satam	20-21
7	मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम की चुनौतियाँ	कु. सांत्वना अग्रवाल	22-24
8	अनुसूचित जाति महिला सशक्तिकरण : एक विश्लेषण (उज्जैन जिले के विशेष सन्दर्भ में)	डॉ. ललिता सोलंकी प्रो. तपन चौरे	25-35
9	भारतीय युवा और भारत	रजनीश बाजपेई	36-38
10	लोकतंत्र की अनिवार्य आवश्यकता के रूप में धर्मनिरपेक्षता	डॉ. कपिल खरे	39-45
11	भारत में महिलाओं की स्थिति एवं विकास	डॉ. सुमन तिवारी	46-53
12	ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में पंचायतों की आवश्यकता एवं महत्व	श्रुति जैन	54-55
13	बढ़ती जरूरतों से उलझता उपभोक्ता संरक्षण	डॉ. असलम खॉन	56-59
14	मुण्डारी साहित्य में काशीनाथ सिंह मुण्डा 'काण्डे' का योगदान	लखीन्द्र मुण्डा	60-62
15	प्राचीन भारत में उच्च शिक्षा	कृष्ण कुमार पाण्डेय डॉ. रामरतन साहू	63-65
16	सार्वजनिक वितरण प्रणाली से संबंधित योजनाएं	डॉ. अशोक सोनी निकिता खरे	66-68
17	महिला सुरक्षा संबंधी कानून – एक विवेचना	ज्योति सिंह (राफिया)	69-72
18	Today's Need – Swachh Bharat Abhiyan	Dr. Prabha Soni	73-75
19	समाजशास्त्रीय अध्ययन : जयपुर शहर में महिला अपराधियों का सामाजिक–आर्थिक विवेचना	रक्षा शर्मा	76-81
20	Indian women's voices in English in the post-colonial and post-modernist era	Dr. Mukesh Pareek	82-89
21	A STUDY ON CORPORATE SOCIAL RESPONSIBILITY (CSR) INITIATIVES IN INDIAN TELECOMMUNICATION INDUSTRY	Mrs Meenakshi Swamy	90-94
22	Strategic Flexibility HR Organizational Design	Dr. Preeti Gupta	95-105
23	Recent Trends in Auditing	Dr. Songirkar Nitin Bhatu	106-110

24	Social movement in Orissa with special reference to kanika movement	Pradeep Kumar Giri	111-117
25	Congress movement in balasore with special abstract reference to quit india movement	Manasi Mohanty	118-120
26	India's Stance towards Iran's Nuclear Programme and Impact on Indo-Iranian Relations	Dr. SHAMIM AHMAD WAGAY	121-124
27	CRYPTOCURRENCIES - A study of its impacts and future	Dr. Smriti Singh Prof. Megha Gandhi	125-131
28	अष्टांग योग का छात्रों के व्यक्तित्व विकास पर प्रभाव	डॉ. प्रशांत शर्मा	132-134
29	The Main Thrust of Mahima Cult	Dr. Surendra Kumar Biswal	135-141
30	मानवीय मूल्यों में सामाजिक व्यवस्था	डॉ. संदीप कुमार चौरसिया	142-144
31	Positive spili over tourism in peace building process : a community	Ms. Priyanka Sharma Mr. Trilochan Kumar	148-159
32	Gandhi on Gender-Based Violence	Miss. Archita Singh	160-164
33	जबलपुर संभाग के जनजाति में उद्यम संबंधी सामाजिक व आर्थिक समस्याएँ एवं उनका समाधान	गोपीचन्द मेश्राम	165-168
34	भारत मे महिला उद्यमी पर एक आलेख	BABITA SINHA	169-170
35	संगीत रत्नाकर में 'तालाध्याय' (विवेचनात्मक अध्ययन)	कंचन सिंह	171-174
36	1857 के स्वतंत्रता आंदोलन में बुन्देलखण्ड की भूमिका	डॉ. रूपल असाटी	175-176
37	Make in India Programme and its Role in Growth of Manufacturing Sector of India	Anubha Chaturvedi	177-181
38	यम एवं नियम ही जीवन का आधार	डॉ. मनोज कुमार शर्मा	182-185
39	स्वाधीनता के बाद मंडला का सामाजिक एवं आर्थिक स्वरूप	डॉ. मनीष कुमार दुबे	186-187
40	योग शक्ति जाग्रति में उपलब्धि	डॉ. एल.जे. पचौरी	188-192
41	पर्यटन विकास में मध्यप्रदेश विकास निगम की भूमिका	प्रवीण स्वामी	193-197
42	कृषि राष्ट्रीय आय का सबसे बड़ा स्त्रोत	Yogesh Kumar Gautam	198-201
43	STATUS OF WOMEN IN MEDIEVAL TIME	Dr. Veena Kurre	202-205
44	महात्मा गाँधी नरेगा की उपयोजना भूमिशिल्प का तुलनात्मक अध्ययन (मध्यप्रदेश के सीधी जिले में भूमिशिल्प उपयोजना प्रारंभ से पूर्व एवं पश्चात् की स्थितियों का अध्ययन)	त्रिलोचन सिंह	206-210
45	गांवों में शिक्षा प्रसार एवं शैक्षिक विकास की चुनौतियां	डॉ. पंकज कुमार यादव	211-214
46	भारत में ऊर्जा स्त्रोतों के वन संरक्षण अधिनियम की उपलब्धता	डॉ. प्रदीप कुमार सोनी	215-222

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 5 March. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

भारत में ऊर्जा स्त्रोतों के वन संरक्षण अधिनियम की उपलब्धता

डॉ. प्रदीप कुमार सोनी
(विभाग–अर्थशास्त्र), शासकीय अरण्य भारती स्नातकोत्तर महाविद्यालय बैहर, बालाघाट (म.प्र.)

भारत में किये गये अध्ययनों का पुनरीक्षण – नेशनल कौंसिल ऑफ एप्लॉइड इकोनॉमिक रिसर्च एन.सी.ए.ई.आर. – (1965) – भारत में ऊर्जा के उपभोग से संबंधित अध्ययन करने का श्रेय एन.सी.ए.ई.आर. को जाता है। इसने भारत के सभी प्रांतों का सर्वेक्षण किया। इनका उद्देश्य भावी ऊर्जा के स्त्रोतों में घाटे का आकलन करना तथा ऊर्जा संरक्षण के लिए सुझाव देना आदि था। एन.सी.ए.ई.आर. ने विशेषकर भारत में ऊर्जा उपभोग का अध्ययन किया, जिसमें इन्होनें पारंपरिक तथा गैर–पारंपरिक ईंधनों को शामिल किया है। ऊर्जा उपभोग में गैर–व्यापारिक ईंधनों का प्रतिशत काफी अधिक है। इसका आकलन 88 प्रतिशत से 89 प्रतिशत है। आशय यह है कि उस समय व्यापारिक ईंधनों की अपेक्षा गैर–व्यापारिक ईंधनों का अधिक वर्चस्व स्थापित था। इसी अवधि के द्वारा प्रति व्यक्ति ऊर्जा के उपभोग का भी अध्ययन किया गया है।

वन नीति और कानून (Forest Policy & Laws) –वन नीतियाँ तथा कानून प्रकृति के संदर्भ में प्रतिबंधात्मक नहीं बल्कि संरक्षणात्मक भूमिका निभाते हैं। हमारे देश में वैज्ञानिक वन प्रबंधन 19वीं शताब्दी के मध्य में अंग्रेजों द्वारा प्रारंभ किया गया, तभी से वन तथा पर्यावरण संरक्षण हेतु कई राष्ट्रीय नीतियाँ तथा कानून पारित किये गये हैं। भारत में वनों का वैज्ञानिक अध्ययन जर्मन राष्ट्रीय सर डाइट्रिक बांडीस की 1864 में भारत में प्रथम वन महानिरीक्षक के रूप में नियुक्ति से प्रांरभ हुआ। उनके निर्देश से ब्रिटिश प्रांतों में वन विभाग सृजित किये गये। वन अधिकारियों को वृक्ष भूमि तथा सभी पहाड़ी क्षेत्रों का निरीक्षण करने और इसके बाद आरक्षित या संरक्षित वन के रूप में बंदोबस्त के रूप उपयुक्त क्षेत्र का सीमांकन तथा सर्वेक्षण करने और नक्शा बनाने के लिए सशक्त बनाने किया गया और इस प्रयोजन के लिए वर्ष 1865 में 'भारतीय वन अधिनियम', 1865 के नाम से अधिनियम अधिनियमित किया योजना विनियमित की गई। 'भारतीय वन अधिनियम', 1878 में अधिनियमित किया गया। इसी समय 'भारतीय वन अधिनियम', VII 1865 संविधान पुस्तिका में बचाव, वनों की कटाई तथा चराई को नियंत्रित करने संबंधी प्रावधान है। वन अधिनियम, 1865 के स्थान पर वन अधिनियम 1873 लाया गया। इसमें वर्ष 1890, 1901, 1918 और 1919 में संशोधन किये गये। इस अधिनियम को सभी प्रांतों में लागू किया गया, जिसमें आरक्षित और संरक्षित वनों को भी सम्मिलित किया गया है।

भारतीय वन अधिनियम, 1927 – वनों तथा वन संसाधनों के आवागमन से संबंधित कानून को अधिक सशक्त बनाने हेतु समेकित 'भारतीय वन अधिनियम', 1927 पारित किया गया, जिसमें इस विषय से संबंधित तत्कालीन प्रावधानों में संशोधन किये गये। आरंभ में वनों को संविधान के राज्य सूची में रखा गया था। तदनुसार 'वन अधिनियम', 1927 राज्यों को सार्वजनिक और निजी वनों पर अधिकारिता प्रदान करता है। 'सार्वजनिक वन' वे हैं जिनमें राज्य सरकारों का साम्पत्तिक हित है। सार्वजनिक वनों को आरक्षित वन, ग्रामीण वन और संरक्षित वन में वर्गीकृत किया जाता है। निजी वन सरकार की सम्पत्ति नहीं है, फिर भी 'भारतीय वन अधिनियम', 1927 राज्य सरकार को वन भूमि पर इमारती लकड़ी की कटाई, जुताई, चराई, वनस्पति दोहन और सफाई को विनियमित करने के लिए प्राधिकृत करता है तथा निजी वन–भूमि को लोक प्रयोजन के लिए अर्जित करने की शक्ति प्रदान करता है। 'भारतीय वन अधिनियम', 1927 वन–भूमि और वन–उत्पादों में विधिवत मान्यता प्राप्त वैयक्तिक या सामुदायिक अधिकारों के संरक्षण और प्रतिकार के लिए भी उपबंध करता है।

वन संरक्षण अधिनियम, 1980 – वर्ष 1960 तक व्यक्तिगत स्तर पर होने वाले वन अपराध को रोकने के लिए 'भारतीय वन अधिनियम', 1927 काफी हद तक सक्षम रहा, लेकिन इस अधिनियम का राज्य सरकारों तथा वन प्रबंध प्राधिकरणों को आरक्षित वनों के अंधाधुंध गैर आरक्षीकरण तथा वन उपभोग को रोकने का प्रावधान नहीं है।

इस प्रकार के अंधाधुंध तथा अपूर्णीय क्षति को रोकने के लिए भारत सरकार ने सर्वप्रथम '42वें संशोधन अधिनियम', 1976 से वनों को संविधान की राज्य सूची से समवर्ती सूची का अंतरित कर दिया। वन क्षेत्रों की लगातार क्षति को रोकने के लिए सरकार ने 'वन (संरक्षण) अधिनियम', 1980 पारित किया। इस अधिनियम के तहत सभी राज्यों की सरकारों तथा सम्बद्ध प्राधिकरणों के लिए वनीय भूमि के गैर वन उपयोग तथा राज्यों द्वारा अंधाधुंध

तरीके से वनीय भूमि के दुरूपयोग को रोकना था। राष्ट्र की पारिस्थिति की सुरक्षा हेतु ऐसा आवश्यक था।

वायु–प्रदूषण एवं कानून – यद्यपि वर्तमान में 150 वर्ष पूर्व प्रदूषण नाम मात्र का था, फिर भी विधि निर्माताओं ने वायु–प्रदूषण की समस्या को पहले ही भाँप लिया था। इसी को ध्यान में रखते हुए भारतीय दण्ड संहिता 1860 की धारा 278 में स्वेच्छा से वायुमण्डल को प्रदूषित करने वाले व्यक्ति के लिए दण्ड का उपबंध किया गया था। इसके साथ ही अन्य वायु प्रदूषण कानूनों का भी अधिनियम किया गया। 'बम्बई नगर निगम', 1988', 'मद्रास शहर उपताप अधिनियम', 1889, 'बम्बई जिला नगर पालिका अधिनिमय', 1901, 'बंगाल धुआँ उपताप अधिनियम', 1905, 'बंगाल स्मोक न्यूसेंस एक्ट', 1908, 'बम्बई स्मोक न्यूसेंस एक्ट', 1912, 'उत्तर प्रदेश नगर पालिका अधिनियम', 1916 व 1959, 'गुजरात नगरपालिका अधिनियम', 1963, 'भारतीय कारखाना अधिनियम', 1934, जिसे 1948 में निरस्त करके 'नवीन कारखाना अधिनियम', 1948 पारित किया गया।

वायु (प्रदूषण नियंत्रण व निवारण) अधिनियम, 1981 –

(1) वायु–प्रदूषण का नियंत्रण, निवारण एवं इसमें कमी करना।

(2) वायु–प्रदूषण के नियंत्रण व निवारण हेतु सरकारी संगठनों का गठन करना।

इस अधिनियम में वायु–प्रदूषकों का परिभाषा को स्पष्ट किया गया है अर्थात् "कोई भी ठोस, द्रव या गैसीय पदार्थ जो वातावरण में इतनी सान्द्रता में उपलब्ध हो कि वह मानव अथवा अन्य जीवित प्राणियों अथवा सम्पत्ति हेतु हानिकारक हो उसे वायु प्रदूषक कहते हैं।" यह अधिनियम के तहत केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रक बोर्ड व राज्य प्रदूषण नियंत्रक बोर्ड के कार्यों का भी स्पष्टीकरण किया गया है अर्थात् वायु प्रदूषण के नियंत्रण में उनकी भूमिका को स्पष्ट किया गया है व उनके अधिकारों का भी स्पष्टीकरण दिया गया है।

राज्य प्रदूषक नियंत्रण बोर्ड विभिन्न वाहनो से निकलने वाले प्रदूषकों की सीमाओं का निर्धारण कर सकते हैं एवं उनका पालन न करने वालों को दण्डित भी कर सकते हैं। राज्य सरकार, राज्य प्रदूषण नियंत्रक बोर्ड की सलाह से किसी भी क्षेत्र को वायु प्रदूषण नियंत्रक क्षेत्र घोषित कर सकती है। जहाँ पर वह किसी भी ईंधन या वायु प्रदूषणकारी पदार्थों के उपयोग को निषेध कर सकती है। साथ ही उस क्षेत्र में कोई भी औद्योगिक इकाई राज्य सरकार की अनुमति के बिना नहीं लगायी जा सकती है।

राज्य प्रदूषण नियंत्रक बोर्ड के अधिकारियों के पास यह अधिकार होते हैं कि वह किसी भी औद्योगिक इकाई का निरीक्षण कर सकते हैं, उनसे पूरा ब्यौरा मांग सकते हैं अथवा अगर वे चाहे तो वहाँ से विभिन्न गैसों के नमूने लेकर उनका परीक्षण कर सकते हैं। अगर कोई भी व्यक्ति अधिनियम का पालन नहीं करता है तो उसे 3 माह का कारावास अथवा 10,000/– जुर्माना अथवा दोनों दण्डों से दण्डित किया जा सकता है।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 – 23 मई, 1986 को माननीय राष्ट्रपति महोदय ने पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 को सहमति प्रदान की जो पर्यावरण संरक्षण हेतु महत्वपूर्ण साबित हुआ, क्योंकि यह अधिनियम पर्यावरण संबंधी परिवेश की रक्षा व रचनात्मक सुधार लाने का प्रयास करता है। केन्द्रीय सरकार ऐसे अधिनियम को पारित करने की आवश्यकता महसूस करती थी, जिसमें पर्यावरण संतुलन को बनाये, वन्य जीवों की सुरक्षा सुनिश्चित करने, प्रदूषण समस्या खत्म करने और जैविक संतुलन से संबंधित प्रावधान हो।

अधिनियम 4 अध्यायों और 26 धाराओं सहित एक संक्षिप्त परंतु महत्वपूर्ण अधिनियम है। प्रथम अध्याय की प्रथम धारा में नाम, शीर्षक, प्रवर्तन, विस्तार से तथा दूसरी धारा परिभाषाओं (पर्यावरण, पर्यावरण प्रदूषक, पर्यावरणीय प्रदूषक, व्यवहार करने, परिसंकटमय पदार्थ, अभियोगी तथा विहीत शब्दावलियों) से संबंधित है। अधिनियम का अध्याय 2 धारा 3 से 6 तक विस्तारित है। यह अध्याय अधिनियम की आत्मा है। इस अध्याय का शीर्षक है केन्द्रीय सरकार की शक्तियाँ। धारा 3 में केन्द्रीय सरकार को पर्यावरण संरक्षण, सुधार के उपाय करने के अधिकार से संबंधित है। धारा 4 केन्द्रीय सरकार को यह अधिकार देती है कि वह अपने कार्यों को संपादित करने हेतु अधिकारियों को नियुक्ति कर उनकी शक्ति तथा कर्तव्यों को निश्चित करें। धारा 5 तथा धारा 6 क्रमशः केन्द्रीय सरकार के निर्देश देने की शक्ति तथा नियम बनाने की शक्ति के बारे में है। इस अधिनियम का सबसे विस्तृत अध्याय तीन धारा 7 से 17 तक है। इनमें पर्यावरण प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण तथा शासन से संबंधित प्रावधानों को सम्मिलित किया गया है तथा इसमें अधिनियम के उल्लंघन के लिए शासित से संबंधित धाराओं को सम्मिलित किया गया है। धारा 7 में औद्योगिक संयंत्र संचालित करने वाले व्यक्तिओं पर निर्धारित मात्रा से अधिक पर्यावरणीय प्रदूषक को उत्सर्जित करने पर प्रतिबंध लगाया गया है। धारा 8 में खतरनाक पदार्थों से व्यवहार करने वालों पर प्रक्रियात्मक सुरक्षा से संबंधित उपायों के पालन की बाध्यता अधिरोपित की गई है।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 5 March. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

धारा 10 में औद्योगिक प्रतिष्ठानों में प्रवेश तथा निरीक्षण की शक्ति से संबंधित, धारा 11 में नमूनों को लेने की शक्ति, धारा 12 में पर्यावरणीय प्रयोगशाला से संबंधित, धारा 13 में सरकारी विश्लेषणों से संबंधित प्रावधान है। धारा 14 सरकारी विश्लेषणों द्वारा तैयार रिपोर्ट के बारे में तथा धारा 15 अधिनियम के प्रावधानों, अधिनिमय के अंतर्गत निर्मित नियमों तथा निर्गत निर्देशों के पालन में असफलता के लिए उपबंध करती है। धारा 16 कंपनी के द्वारा अपराधों संबंधित तथा धारा 17 सरकारी विभागों द्वारा किये अपराधों से संबंधित प्रावधान करती है।

इस अधिनियम का अंतिम अध्याय चार, धारा 18 से 26 प्रकीर्ण प्रावधान का है। धारा 18 सद्भाव में किए कार्यों को संरक्षण देती है। धारा 19 अपराधों के संज्ञान की धारा 20 सूचनाओं व रिपोर्ट तथा विवरणियों से संबंधित है। धारा 21 के अनुसार इस अधिनियम की धारा 3 के अंतर्गत गठित प्राधिकरण के सदस्य अधिकारी तथा कर्मचारियों को लोग सेवक घोषित किया गया है। इन्हें भारतीय दण्ड संहिता की धारा 10 के अंतर्गत कुछ विशेष अधिकार प्राप्त हैं। धारा 22 क्षेत्राधिकार पर प्रतिबंध तथा धारा 23 प्रत्योजन के अधिकार संबंधित है। धारा 24 में अन्य विधियों के इस अधिनियम पर प्रभाव की चर्चा की गई है। धारा 25 में नियम बनाने की शक्ति तथा धारा 26 इन नियमों को संसद के समक्ष रखे जाने की अनिवार्यता के बारे में प्रावधान करती है। इस प्रकार उपरोक्त विवरण से निष्कर्ष निकलता है कि उपरोक्त अधिनियम का व्यवहारिक एवं न्यायिक एवं न्यायिक तौर पर महत्व कम नहीं है। एक वृहद् पर्यवेक्षण इस दिशा में प्रस्तुत किया गया है तो अधिनियम के उद्देश्यों को सार्थकता प्रदान करेगी।

केन्द्र सरकार को प्रदूषण निवारण नीति, 1992 – इस नीति में प्रदूषण का स्त्रोत पर ही रोकने पर बल दिया गया है तथा सर्वश्रेष्ठ तकनीकी उपाय अपनाने पर जोर दिया गया है। प्रदूषण फैलाने वाले औद्योगिक इकाईयों से क्षतिपूर्ति वसूल करने की बात प्रदूषण निवारण नीति के अंतर्गत की गई है। प्रदूषण निवारण नीति में अन्य क्षेत्रों के लिए भी प्रदूषण रोकने के लिए कुछ व्यवस्थाएँ की गई हैं जो निम्न हैं – पर्यावरण की दृष्टि से खतरनाक किस्म के कीटनाशकों को क्रमबद्ध तरीके से प्रचलन से हटा लिया जायेगा। उर्वरकों के प्रयोग व उत्पादन हेतु एक नई उर्वरक नीति बनाने की व्यवस्था की गई है। जिन क्षेत्रों में खनन कार्य होता है, यदि उनमें कोई क्षेत्र पर्यावरण की दृष्टि से संवेदनशील प्रतीत होता है तो वहाँ खनन की अनुमति नहीं दी जायेगी। वाहनों के धुएँ से होने वाले प्रदूषण को रोकने हेतु कड़े उपाय किये जायेंगे।

जल (प्रदूषण नियंत्रण व निवारण) अधिनियम, 1974 –

(1) जल–प्रदूषण का नियंत्रण, निवारण करना।

(2) जल की गुणवत्ता को बनाये रखना।

(3) जल–प्रदूषण के नियंत्रण व निवारण हेतु विभिन्न संगठनों का गठन करना।

इस अधिनियम के तहत जल–प्रदूषण की परिभाषा नियंत्रक बोर्ड व राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की स्थापना तथा उनके कार्यों का स्पष्टीकरण किया गया है। अर्थात् जल–प्रदूषण के नियंत्रण में इनकी भूमिका को तथा उनके अधिकारों का भी स्पष्टीकरण किया गया है। केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रक बोर्ड का कर्तव्य है कि वह राज्यों के विभिन्न जल स्त्रोतों की स्वच्छता एवं विकास को बढ़ावा दें। यदि जल संसाधनों को लेकर विभिन्न राज्यों में मतभेद है तो उनका निपटारा करें। जल प्रदूषण के नियंत्रण हेतु राज्य बोर्ड को तकनीकी सहायता प्रदान करें तथा विभिन्न प्रदूषकों की सीमाओं का निर्धारण करें तथा प्रदूषकों के परीक्षण हेतु प्रयोगशालाओं की स्थापना करें।

राज्य प्रदूषक नियंत्रण बोर्ड के कार्यों में राज्य विशेष में प्रदूषण पर नियंत्रण, विभिन्न जल स्त्रोतों के आस–पास स्थित औद्योगिक इकाईयों के जल के नमूनों का परीक्षण, व्यर्थ जल के पुनःउपयोग हेतु विभिन्न तकनीकों का सुझाव देना तथा केन्द्रीय प्रदूषक नियंत्रण बोर्ड के निर्देशों का पालन करना सम्मिलित है।

राज्य प्रदूषण नियंत्रक बोर्ड के पास यह अधिकार है कि वह किसी भी औद्योगिक इकाई अथवा जलीय स्त्रोत के नमूने ले सकता है, उसका परीक्षण कर सकता है एवं किसी भी जल स्त्रोत के पानी का औद्योगिक इकाईयों में उपयोग पर रोक लगा सकता है। तथा यदि कोई व्यक्ति इस अधिनियम का पालन नहीं करता है तो उसे 3 माह का कारावास अथवा 10,000/– जुर्माना अथवा दोनों दण्डों से दण्डित किया जा सकता है।

वन्य जीव (सुरक्षा) अधिनियम, 1972 – वन्य जीव (सुरक्षा) अधिनियम, 1972 वन्य जीव तथा उनके आवास–स्थलों की सुरक्षा हेतु केन्द्र सरकार द्वारा 1972 में लागू किया गया तथा अधिनियम में समय–समय पर उचित संसोधन भी किये जाते रहे हैं। इस अधिनियम के तहत समस्त वन्य जीवों को छह अनुसूचियों में विभक्त किया गया है। इस अधिनियम में शेर, भालू, एवं अन्य वे जानवर जिनका अस्तित्व खतरे में प्रतीत हो रहा है, के शिकार पर प्रतिबंध है। यदि किसी प्राणी विशेष का शिकार करना

अपरिहार्य स्थितियों में आवश्यक हो जाता है तो राज्य का मुख्य वन प्रतिपालक उसके शिकार की आज्ञा प्रसारित कर सकता है। जैसे राज्य सरकार ने दिनाँक 19 जनवरी 1996 को नोटिफिकेशन जारी कर ऐसी नीलगायों को, जो कृषकों के फसल को नुकसान पहुँचाती है, को मारने हेतु अनुमति जारी करने हेतु कुछ जिलों के मण्डल वन अधिकारी/उप वन संरक्षक/उप मुख्य वन्य जीव प्रतिपालक को प्राधिकृत किया।

राज्य सरकार किसी वन क्षेत्र (यदि आवश्यक हो तो गैर वन क्षेत्र भी) को इस अधिनियिम के दिये गये प्रावधानों के अंतर्गत वन्य जीव अभयारण्य, राष्ट्रीय पार्क तथा शिकार निशिद्ध क्षेत्र घोषित कर सकती है। इस अधिनियम के तहत केन्द्र (यदि आव" यक हो तो गैर–वन क्षेत्र भी) को इस अधिनियम के दिये गये प्रावधानों के अंतर्गत वन्य जीव अभयारण्य, राष्ट्रीय पार्क तथा शिकार निषिद्ध क्षेत्र घोषित कर सकती है। इस अधिनियम के तहत केन्द्र सरकार भी किसी क्षेत्र को अभयारण्य या राष्ट्रीय पार्क घोषित कर सकती है। इस अधिनियम के अंतर्गत अभयारण्य में वन्य जीवों के शिकार, उन्हें पकड़ना, उनके आवास–स्थल को उजाडना इत्यादि पर प्रतिबंध है तथा अभयारण्य में आग लगाना, सशस्त्र अभयारण्य में प्रवेश करना, अभ्यारण्य में विस्फोटक रसायन या अन्य कोई पदार्थ, जो वन्य जीवों को नुकसान पहुँचाता हो, का उपयोग करना वर्जित है। इस अधिनियम के अंतर्गत वन्य जीवों के उत्पादों से निर्मित किसी भी वस्तु इत्यादि का व्यापार आदि वर्जित है। वन्य अधिकारियों के लिए वन्य जीवों से संबंधित अपराधों को रोकने हेतु पर्याप्त शक्तियाँ प्रदान की गई है, जिसमें वह बिना वारंट किसी मुलजिम के आवास/व्यवसाय स्थल पर प्रवेश कर तलाशी ले सकते हैं एवं मुलजिम को गिरफ्तार कर पूछताछ कर सकता है। इस दौरान वन्य अधिकारी के द्वारा दर्ज बयान इत्यादि न्यायालय में मान्य होंगे।

एन.सी.ए.ई.आर. का अध्ययन बम्बई के बहुस्तरित निर्देशन के आधार पर चुने गये न्यादर्शो के सर्वेक्षण पर आधारित है। इनका अध्ययन का संबंध 1970–71 से संबंधित है। जिसके आधार पर 1973–78 की माँग का अनुमान लगाया गया। सर्वेक्षण से निष्कर्ष निकलता है कि ऊर्जा के उपभोग में मिट्टी का तेल, विद्युत जलाऊ लकड़ी में कमी तथा एल.पी.जी., विद्युत, गैस तथा टाऊन गैस की वृद्धि की संभावना थी। अध्ययन का संबंध केवल ऊर्जा स्त्रोतों का विभिन्न मदों में उपभोग से था। इसमें ऊर्जा की मात्रा एवं प्रकारों की चर्चा नहीं की गई है। उपभोग को आय प्रभावित करती है। आय में कमी या वृद्धि ऊर्जा उपभोग को प्रभावित करती है। जैसे निम्न वर्ग द्वारा मिट्टी का तेल, जलाऊ लकड़ी इत्यादि का तथा उच्च वर्ग द्वारा एल.पी.जी. विद्युत का उपभोग किया जाता है।

भारत की यही स्थिति है। वह अपनी वर्तमान उपभोग से ही संतुष्ट है इसे दूर करने के लिए टी.ई.आर. आई. द्वारा ऊर्जा संरक्षण द्वारा सुझाव दिये गये है। भारत में ऊर्जा संरक्षण कार्यक्रमों में और तेजी लाना चाहिए। ताकि उत्पादन व वितरण के द्वारा ऊर्जा बचत किया जा सके और यह सिद्ध हो चुका है कि एक सर्वांगीण नियोजित प्रक्रिया के द्वारा ही ऊर्जा की बचत की जा सकती है। जो मानव जाति एवं पर्यावरण के हित में है।

इनका विचार है कि किसी राष्ट्र के लिए ऊर्जा संगठन की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। क्योंकि इससे आर्थिक विकास को बढ़ावा मिलता है। स्वतंत्रता के पश्चात यह तर्क दिया गया है कि भारतीय अर्थव्यवस्था में एक ऐसी ऊर्जा नीति की आवश्यकता है कि जो ऊर्जा प्रणाली की माँग व पूर्ति को नियंत्रित की जा सके। इसके लिए आवश्यक है कि सार्वजनिक व निजी क्षेत्र में विनियोग तथा देश के ऊर्जा क्षेत्रों का ठोस विस्तार किया जाये। लेकिन भारत इस समय गंभीर परिस्थितियों से गुजर रहा है। जिसका प्रभाव कृषि, उद्योग, वाणिज्य क्षेत्रों पर पड़ रहा है साथ ही देश की आर्थिक व सामाजिक विकास की गति धीमी होती जा रही है। निष्कर्ष रूप में सागर जी ने कहा है कि ऊर्जा एवं पर्यावरण संतुलन किसी भी देश के लिए आधारभूत तत्व है।

ऊर्जा स्त्रोत में भारत में किये गये अध्ययन –

1. भारत में ऊर्जा उपभोग से संबंधित अध्ययन करने का श्रेय एन.सी.ए.ई.आर. (1965) को जाता है। अध्ययन का निष्कर्ष यह है कि उस समय व्यापारिक ईंधनों की अपेक्षा गैर–व्यापारिक ईंधनों का वर्चस्व स्थापित था। अध्ययन में यह बात सामने आयी कि आय में कमी या वृद्धि उपभोग को प्रभावित करती है।

2. जैसे–जैसे तीव्र आर्थिक विकास होता है वैसे–वैसे ऊर्जा उपभोग की मात्रा में भी वृद्धि होती है।

3. परम्परागत ऊर्जा स्त्रोतों का उपयोग ज्यादा दिनों तक नहीं किया जा सकता। वैकल्पिक ऊर्जा के रूप में सौर ऊर्जा की कमी को पूरा किया जा सकता है। साथ ही भविष्य में ऊर्जा संकट को दूर करने के लिए ऊर्जा के संभावित स्त्रोतों की खोज करने की सलाह दी गई है।

4. ऊर्जा का उपभोग और प्रति व्यक्ति आय का सीधा संबंध है। आय में कमी या वृद्धि ऊर्जा उपभोग को प्रभावित करती है।

5. ऊर्जा के परम्परागत स्त्रोत महंगे एवं क्षणभंगुर होने के कारण पर्यावरण को दूषित करने वाले होते हैं। इसकी ओर ऊर्जा के गैर–परम्परागत स्त्रोत सस्ता, सरल के साथ पर्यावरण प्रदूषण से मुक्त है। शोध साहित्यकार ने ऊर्जा के परम्परागत स्त्रोतों से अपनी ऊर्जा संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति करने का सुझाव दिया है।

6. ऊर्जा के परम्परागत स्त्रोतों का विदोहन विवेकपूर्ण किया जाये। जिससे पर्यावरण संरक्षण की शर्त कायम रहे और तीव्र आर्थिक विकास होता रहे।

7. ऊर्जा प्रणालियों का उद्देश्य पर्यावरण प्रदूषण को कम करना है। अर्थात् ऊर्जा का उत्पादन गैर–परम्परागत स्त्रोतों से किया जाये। इसके तहत सौर ऊर्जा एवं बायोमॉस महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। निष्कर्ष के रूप में पर्यावरण संतुलन को बनाये रखने के लिए ऊर्जा संबंधी समस्या का हल ढूंढ़ना चाहिए।

8. आज चारों ओर जो पर्यावरण प्रदूषण व्याप्त है उसका मुख्य कारण परम्परागत ऊर्जा स्त्रोतों का अत्यधिक विस्तारपूर्वक उत्पादन व उपभोग करने से है। यदि ऊर्जा के गैर–परम्परागत स्त्रोतों से ऊर्जा का उत्पादन किया जाये तो प्रदूषण नहीं होगा और पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति हो जायेगी।

9. यदि हमें ऊर्जा व पर्यावरण में संबंध स्थापित करना है तो हमें उन समस्याओं के प्रति ध्यान देना होगा, जो इन तथ्यों को प्रभावित करते हैं। इसके लिए ऊर्जा तकनीक और पर्यावरण संरक्षण की जरूरत है। अतः एक ऐसी आर्थिक विकास मॉडल की आवश्यकता है, जिसका पर्यावरण पारिस्थितिकीय तथा सम्पोषित विकास पर सकारात्मक प्रभाव पड़े।

10. ऊर्जा प्रबंध एक ऐसी सुसंगठित योजना है, जिसका उद्देश्य संगठित ऊर्जा कार्यक्रम से है। जो पर्यावरणीय संसाधनों के उपयोग को निर्धारित करने का प्रयास करते हैं। संक्षेप में, ऊर्जा प्रबंध से तात्पर्य ऊर्जा उपभोग पर प्रबंधन, ऊर्जा बचत अवसरों की पहचान, ऊर्जा बचत अवसरों का क्रियान्वयन, ऊर्जा नीति तथा नये प्रभावशाली कार्य से है। इसके लिए राज्य और केन्द्र सरकार को ऊर्जा अनुसंधान और विकास नीतियों पर ज्यादा ध्यान देने की जरूरत है। निष्कर्ष के रूप में ऊर्जा व पर्यावरण संतुलन किसी भी देश के लिए आधारभूत तत्व है। ऊर्जा व पर्यावरण सुरक्षा से संबंधित कोई भी विपरीत समझौता नहीं किया जायेगा, जो प्राकृतिक नियम के प्रतिकूल हो।

11. पर्यावरण संरक्षण नीतियों के लिए लगातार सुधार प्राकृतिक संसाधनों को बढ़ावा, अच्छा तकनीक, भागीदारिता, शिक्षा नीति का क्रियान्वयन एवं आकलन को शामिल किया गया है। इनसे पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है।

12. आज जो ऊर्जा व पर्यावरण समस्या उत्पन्न हो रही है, उसका मुख्य कारण बढ़ती हुई जनसंख्या है। अतः ऊर्जा संरक्षण और पर्यावरण संरक्षण की पहली शर्त जनसंख्या वृद्धि में नियंत्रण है।

13. ऊर्जा का दोहन उस क्षमता तक किया जाये, जिससे पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव न पड़े। अर्थात् ऊर्जा का विवेकपूर्ण दोहन किया जाये। साथ ही प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग इस बात को ध्यान में रखकर किया जाये कि संसाधन सीमित हैं, इनका विदोहन समुचित मात्रा में हो। जिससे पर्यावरण संरक्षण व ऊर्जा संरक्षण में संबंध स्थापित किया जा सके।

14. जब किसी देश की औद्योगिक संरचना में वृद्धि होती है, तो ऊर्जा के उत्पादन व उपभोग क संरचना में भी परिवर्तन आता है। अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि अगर ऊर्जा उपभोग की कीमत अधिक है, तो कम मात्रा में उपयोग करेंगे और यदि कीमत कम है तो उंपभोग अधिक करेंगे।

15. उन्नत जीवन के लिए ऊर्जा का दोहन व पर्यावरण की स्वच्छता प्रथम शर्त है। लेकिन इन शर्त को पूरा करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण विदोहन करने की जरूरत है। ताकि मानव जीवन और अधिक सुन्दर हो जाये।

कृषि आधारित अर्थव्यवस्था – छत्तीसगढ़ राज्य के लगभग 80% जनसंख्या का जीवन–यापन कृषि पर आश्रित है। प्रदेश के 32.55 लाख कृषक परिवारों में से 76% लघु एवं सीमांत श्रेणी में आते हैं। वर्तमान में प्रदेश में सभी स्त्रोतों से लगभग 29% क्षेत्र में सिंचाई सुविधा उपलब्ध है। उपलब्ध सिंचाई में से सर्वाधिक 66% क्षेत्र सिंचाई जलाशयों/नहरों के माध्यम से सिंचित है। प्रदेश की लगभग 55% कास्तभूमि की जलधारण क्षमता कम होने के कारण बिना सिंचाई साधन के दूसरी फसल लेना संभव नहीं होता।

आरक्षित वन (Reserved Forest) – छत्तीसगढ में 2011–12 में आरक्षित क्षेत्र का क्षेत्रफल 24695.00 वर्ग किलोमीटर था। यह कुल वन क्षेत्र का 40.48% है, आरक्षित वन में मानवीय हस्तक्षेप पूर्णतः वर्जित है। इन वनों की श्रेणी में राष्ट्रीय उद्यान व अभ्यारण को रखा गया है। आरक्षित वन आर्थिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। भूमि कटाव, बाढ

की रोकथाम, जलवायु व लकड़ी आपूर्ति की दृष्टि से इन्हें सुरक्षित वनों की श्रेणी में रखा गया है। इन वनों में लकड़ी काटना, पशु चराना निशेध है क्योंकि यह सरकारी सम्पत्ति मानी जाती है। इससे अनेक मूल्यवान वनोपज वस्तुएँ प्राप्त की जाती है।

संरक्षित वन (Protected Forest) – राज्य में संरक्षित वनों का विस्तार 1999–2000 में 191.00 हेक्टेयर क्षेत्र में था। यह कुल वन क्षेत्र का 29.2% में संरक्षित वन है। 2011–12 में संरक्षित वन का क्षेत्रफल 17791 वर्ग किलोमीटर है, जो कुल वन क्षेत्र का 29.16% है। इन वनों में आरक्षित वनों की तरह कड़े नियम नहीं है। परंतु पर्याप्त देख–रेख की जाती है। यद्यपि लकड़ी काटना तथा पशुचारण भी किया जाता है। परंतु वनों की क्षति न हो इसके लिए पर्याप्त देख रेख की जाती है।

आज देश में योजनाकारों एवं नीति निर्धारकों के सामने एक गंभीर समस्या यह है कि किस प्रकार ऊर्जा स्त्रोतों का समुचित दोहन इस प्रकार किया जाये कि उच्च आर्थिक वृद्धि दर की प्राप्ति हो सके और पर्यावरण संतुलन बना रहे। "ऊर्जा अर्थव्यवस्था की चालक शक्ति है।" अर्थात् "ऊर्जा आर्थिक विकास की कुंजी है" तथा यह सभी क्षेत्रों की कुशलता का एक महत्वपूर्ण निर्णायक कारक है। इसी कारण ऊर्जा विकास की रणनीति आर्थिक विकास की रणनीति का आंतरिक हिस्सा होती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ऊर्जा संसाधनों एवं पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में कई वर्षो के नियोजित प्रयासों के फलस्वरूप संतोष जनक प्रगति हुई है।

प्रकृति सदा से ही रत्नागर्भा रही है। विपुल सम्पद्दा की स्वामिनी के वैभव से हर कोई आकर्षित और चकांचौंध रहा है। प्राचीन काल में अधिकांश कार्य तथा उत्पादन प्रायः मनुष्य द्वारा हाथ से किये जाते थे। ऊर्जा के माध्यम से ही मानव ने पाषाण युग से अंतरिक्ष युग तक की कठिन व लंबी यात्रा तय की है। इस महान यात्रा में मानव का संबल रही ऊर्जा विभिन्न रूपों में उसका साथ निभाने वाली नैसर्गिक संगिनी थी। हमने अपने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इतना अधिक विकास किया है कि जीवन आरामदायक हो गया है। प्राकृतिक संसाधनों से जाने–अनजाने में छेड़–छाड़ की, जिसके परिणाम स्वरूप न सिर्फ अजैविक समस्या अपितु जैविक घटकों में भी परिवर्तन आया है। इस प्रकार, मानव ने "मानव निर्मित तंत्र" का निर्माण कर प्रकृति पर विजय पाने की लालसा से कार्य किया, जिसके कारण ऊर्जा स्त्रोतों एवं पर्यावरण पर दुष्परिणाम जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो रही है। सामान्य शब्दों में कार्य निष्पादित करने के लिए जो शक्ति व्यय होती है, वह ऊर्जा कहलाती है।

औद्योगिक क्रांति के पश्चात् ऊर्जा का महत्व और अधिक बढ़ गया। साथ ही इसने ऐसी अनेक समस्याओं को जन्म दिया है, जो मानव जाति के लिए हानिकारक है। भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ ऊर्जा की पूर्ति पारम्परिक ऊर्जा स्त्रोतों से ही पूरा किया जाता है। लेकिन 1930 की विश्व व्यापी मंदी इन्हीं ऊर्जा संबंधी नीतियों पर पुर्नविचार करने को विवश किया। आज हम विकासशील देश से विकसित देश कहलाने के लिए बेताब हैं और हमें कुछ वर्षो तक इन्हीं लक्ष्यों का पीछा करना है। साथ ही ऊर्जा की उपलब्धता एवं पर्यावरण संरक्षण के लिए सकारात्मक कदम भी उठाना है। सच तो यह है कि हमें अपनी आने वाली पीढ़ी को स्वच्छ, स्वस्थ और सुन्दर वातावरण देना आज हमारा पहला उत्तरदायित्व है।

आज ऊर्जा एवं पर्यावरण के बीच असंतुलन पैदा हो गया है। दिनों–दिन ऊर्जा स्त्रोतों के भण्डार समाप्त हो रहे हैं जिसके कारण पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है और यदि यही स्थिति बरकरार रही तो मानव समुदाय और जीव–जंतु के लिए संकट पैदा हो जायेगा। इसे हम ऊर्जा संकट के रूप में परिभाषित करेगें। ऊर्जा जो प्रगति की वाहंक है, यह मानव श्रम को दो गुना बढ़ा देती है। ऊर्जा आधुनिक सुलभता की कुंजी है। ऊर्जा संकट आज के युग की वास्तविकता है। इसे इन्कार करना या उपेक्षा करना दोनों घातक है। वह स्थिति जिसमें ऊर्जा का प्रदाय सीमित और ऊर्जा की माँग अधिक होती है, ऊर्जा संकट कहलाती है। अतः आज ऐसी समन्वित ऊर्जा नीति की आवश्यकता है, जो केवल मानव के लिए ही नही, अपितु सम्पूर्ण जीव समुदाय के लिए जरूरी है। अंतरिक्ष से भले ही हमारा ग्रह सुन्दर दिखाई देता है, लेकिन आज स्थितियाँ बदली हुई है। क्योंकि आज आधुनिकता की अंधी दौड़ ने नवीन मूल्यों की घुसपैठ कर भारतीय सभ्यता को प्रभावित किया है।

वर्तमान में हमारी प्रमुख समस्या एवं पर्यावरण में संतुलन स्थापित करना है। हमें वैभववादी सभ्यता का त्याग करना होगा और हमें ऊर्जा के उन स्त्रोतों की उपलब्धता पर ध्यान देना है, जो प्रदूषण से कोषों दूर है। डॉ. राधाकृष्णन ने कहा है कि "इतिहास अटल नहीं है, हम लहरों के विपरीत तैर सकते हैं, साथ ही दिशा को परिवर्तित भी कर सकते हैं।" अतः मनुष्य जिसकी सृष्टि नहीं कर सकता, उसे बर्बाद करने का भी उसे कोई अधिकार नहीं है। वर्ष 1970 में प्रथम बार पृथ्वी दिवस मनाया गया, जिसने पर्यावरण संरक्षण की दिशा में एक नई क्रांति को जन्म

दिया। पर्यावरण संरक्षण से तात्पर्य वातावरण के घटकों को सुरक्षा प्रदान करना है। जिससे मानवीय कार्य पर न्यूनतम कुप्रभाव पड सके, और वह तत्व लम्बी अवधि तक मानव के उपयोग के लिए उपलब्ध हो सके। संपूर्ण जीव सभ्यता के लिए ऊर्जा की आवश्यकता जीवन के आरंभ से ही बहुत महत्वपूर्ण रही है। ऊर्जा के एक आधारभूत क्षितिज के बिना जीवन की कल्पना असंभव है। मानव द्वारा विज्ञान की प्रगति के साथ पूरे अंतरिक्ष में जब आरंभ की, तो उसने अपने एक मात्र ग्रह–पृथ्वी के विकल्प की भी तलाश आरंभ की। पूरे अंतरिक्ष में और ब्रह्माण्ड के अनंत क्षितिज तक, जहाँ तक भी मानव अपनी बुद्धि, विज्ञान, ज्ञान एवं कल्पना से पहुँच सकता है या किसी आध्यात्मिक शक्ति से भी पहुँच सकता है।

उन सभी पहुँचों के अंतर्गत अभी तक तो एक भी ग्रह पृथ्वी के विकल्प के रूप में दिखाई तक नहीं पड़ा है। अनेकों प्रश्न हैं? पर क्या थोड़ी भी कोई संभावना है कि मानव या जीव के रहने लायक कभी कोई ग्रह मिल भी जाये, तो वह पृथ्वी छोड़कर बस सकता है। हमारे अनुमान में इसकी संभावना आज के युग में तो महाशून्य ही है। फिर भी कितनी दुखद स्थिति है कि मानव अपनी इस पृथ्वी माँ को अपने दुष्कृत्यों से तबाह करने से बाज आने के बजाये ब्रह्माण्ड अनंत कोनों पर एक दूसरी पृथ्वी खोजने में बेतहाशा धन तथा श्रम खर्च कर रहा है।

यद्यपि यह सत्य है कि अंतरिक्ष अन्वेषण की प्रक्रिया में अनेकों नई तकनीकियों का विकास हुआ है। किंतु आज के वर्तमान पल में जो सबसे बड़ी आवश्यता है, वह है पृथ्वी पर रह रहे मानव के उपभोग से प्रदूषण के बोझ को कम करना, प्राकृतिक संसाधनों के दोहन को कम करना। आधुनिकता से उपजी प्रगति की राह प्रकृति को रौंद कर जाती है। प्रदूषण से बचने की तकनीक विकसित हो चुकी प्रगति की उस दौंड़ में शामिल है, जहाँ कोई भी कभी भी रौंद सकता है। जीवन के तमाम ऐश्वर्य जुटा रहे हैं, मगर जीने की फुरसत ही नहीं मिलती।

हिन्दू संस्कृति में मानव प्रकृति के स्वतंत्र अस्तित्व को स्वीकारने पर बल दिया है। मनुष्य को, प्रकृति को वश में करने की बजाय स्वयं को वश में करने और प्रकृति से सामंजस्य बढ़ाने को कहा गया है। यदि प्रकृति में एक काफी की झाड़ी दस किलोग्राम बीज देती है, तो मनुष्य अपने भोगवाद वश में करके दस किलोग्राम में ही काम चलाये। रासायनिक खादों के उपयोग से काफी के उत्पादन को दस किलोग्राम से बढ़ाकर 15 किलोग्राम करना प्रकृति के वश में है। अपने उपभोग को 15 किलोग्राम से 10 किलोग्राम कर लेना अपने स्वयं के वश में है। प्रकृति और मनुष्य में सामंजस्य दोनों तरह से स्थापित होता है, परंतु अंतिम लक्ष्य नहीं। भोग करना इसलिए आवश्यक है कि भोग जन्मजात तृष्णा से छुटकारा मिल जाये, इसलिए हमारे लिए न तो उपभोग में निरंतर वृद्धि करना आवश्यक है और नहीं प्रकृति को वश में करना। जरूरत केवल ऊर्जा स्त्रोतों की उपलब्ध मात्रा को विवेकपूर्ण ढंग से विदोहन करने की है। जिससे वातावरण घटकों का उचित तालमेल बना रहे, जो पर्यावरण संरक्षण के लिए नितांत जरूरी है।

इस अध्याय में हमनें सर्वप्रथम ऊर्जा की प्रस्तावना एवं विषय वस्तु को स्पष्ट करते हुए छत्तीसगढ़ में ऊर्जा की उपलब्धता एवं पर्यावरण संरक्षण की नीतियों का विश्लेषण किया है। द्वितीय – ऊर्जा की परिभाषा का विश्लेषण किया गया है। तृतीय – कृषि, औद्योगिककरण, परिवहन, रोजगार, तकनीकी परिवर्तन, आर्थिक विकास, क्षेत्रीय विषमताएँ में ऊर्जा के महत्व का विश्लेषण किया गया है। चतुर्थ – ऊर्जा उपभोग की संरचना अर्थात् घरेलू, औद्योगिक, जलकार्य, कृषि, स्ट्रीट प्रकाश का विश्लेषण कर ऊर्जा के उत्पादन व उपभोग को स्पष्ट किया गया है। पंचम – शोध के उद्देश्य, शोध प्रविधि–अध्ययन की अवधि, आंकड़ों का संकलन, विश्लेषण की विधि, परिकल्पनाएँ और अंत में अध्ययन के क्षेत्र को स्पष्ट किया गया है। षष्ठम् – इसमें भारत और विभिन्न देशों में किये गये साहित्य के अवलोकनों का अध्ययन कर पुनरीक्षण किया गया है और अंत में शोध साहित्य के अध्ययन का निष्कर्ष को स्पष्ट किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

- एन.सी.ए.ई.आर. (1965–1975) – 'कामेस्टिक फ्यूल इन इण्डिया' एडवरजरी बोर्ड आन एनर्जी ए : पर्सपेक्टिव ऑन डिमाण्ड फॉर एनर्जी इन इण्डिया.
- न्यूक्लियर, एनर्जी एण्ड सोसिलेटर (2004) – 'एटोमिक' गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया, मुम्बई.
- प्रो. नटराजन (2000) – 'रोल ऑफ रिन्यूबल एनर्जी इन दॉ ट्रिनटी वन सेन्चुरी इनवायरमेट एण्ड पिवपल, नई दिल्ली.
- प्रो. क्यूटला, जे.व्ही. (1967) – 'कन्जरवेशन रिकंडिसेटरडेन्स–ट्यूनिश इन्वायरमेंटल इकोनॉमिक्स,' प्रिन्स हॉल, न्यू जारसी.
- पचौरी, सोनाली एण्ड स्प्रिंग, डेनियल (2004) – 'एनर्जी यूज एण्ड एनर्जी एक्सेस इन रिलेशन टू पावर्टी' ई. पी. डब्ल्यू., मुंबई.

- पेन्डसे, डी. आर. (1980) – 'एनर्जी क्रॉईचेस एण्ड इट्स इम्पेक्ट ऑन एनर्जी कन्जूमर्स इन थर्ड वर्ल्ड' ई. पी. डब्ल्यू.
- फिलीपीन्स ऑफ एनर्जी मिनस्ट्री (1982) – 'एशियन डबलपमेंट बैंक इमपलीकेशन ऑफ टेक्नीकल असिसटेन्स इन दॉ एनर्जी सेक्टर ऑफ एशिया डबलपमेंट कन्ट्रीज'.
- फिलोप्पोचि (1911) – 'आउटलुक ऑफ पॉलिटिकल इकोनॉमी' अंक–1, 9वॉ प्रकाशन, पृष्ट–34.
- पीटर ए विक्टर (1972) – 'पॉल्यूशन इकोनॉमी एण्ड एनवायरमेंटल ग्रोथ एण्ड न्यूविन लिमिटेड', पब्लिस ऑफ आक्सफोर्ड.
- पेन्डसे, डी.आर. (1980) – 'एनर्जी फ्राइचेस एण्ड इट्स इम्पेक्ट ऑन एनर्जी कन्ज्यूमर्स इन थर्ड वर्ल्ड,' इ.पी.डब्ल्यू.
- पिट (1985) – 'एस्टीमेटिंग इण्डस्ट्रीयल एनर्जी डिमांड विथ फार्म लेवर बाय दॉ ऑफ इण्डोनेशिया' एनर्जी जनरल.
- पारिख, ज्योति एण्ड पण्डा, मनोज (1994) – 'कन्जम्पशन पैटर्न डिफरेंसेस एण्ड इनवायरमेंटल इम्प्लीकेशन : ए केश स्टडी ऑफ इण्डिया, अक्टूबर 21.
- पाण्डे, वैभव (2005) – 'ग्लोबल वार्मिंग की घंटी' कुरूक्षेत्र जून, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, पृष्ट – 26–27.